# प्रवास में स्त्रियों की अनदेखी

## सरकारी आँकड़ों की वैधता

**नेहा राय**

किसी शहर को बनाने और तराशने में स्थानीय लोगों के साथ वहाँ दूसरी जगहों से आकर बसने वाले लोगों की भी भूमिका होती है। गाँवों से आने वाले लोग दिल्ली और मुम्बई जैसे शहरों को जीवंत करते हुए उनका नवीकरण करते हैं। आव्रजन और प्रवास का यह रुझान दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, क्योंकि शहरों में गाँवों की अपेक्षा सुविधाएँ ज़्यादा होती हैं जो गाँव में रहने वाले बेरोज़गार युवाओं को आकर्षित करती हैं। यह अलग बात है कि उन सुविधाओं पर प्रवासियों की हक़दारी कुछ सरकारी काग़ज़ों के अभाव के कारण कारगर नहीं हो पाती। भारत की जनगणना पर विचार किया जाए तो हर दस साल में शहरों की जनसंख्या में कई प्रतिशत वृद्धि दिखाई देती है। यह 1951 में छह करोड़ बीस लाख से बढ़ कर 2011 तक सैंतीस करोड़ सत्तर लाख तक पहुँच गयी है।[1] 2001 से 2011 के बीच पूरे देश में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत 27.7 से बढ़ कर 31.1 हो चुका है। कई समाज-विज्ञानी शहरों की सुविधाओं और आकर्षण को प्रवसन का मुख्य कारण मानते हैं।[2]

---

[1] राम.बी. भगत (2011).

[2] रेवेंस्तीन (1889), जान ब्रेमन (1996) आदि ने आकर्षण-विकर्षण सिद्धांत में बताया है कि गाँव से शहर के लिए प्रवास करने का मुख्य कारण मूल स्थान पर विकर्षण का उत्पन्न होना है. जैसे, वहाँ रोज़गार, ग़रीबी, कृषि-उत्पादन में कमी के कारण उनकी ज़रूरतें पूरी नहीं हो पातीं. दूसरी तरफ़, आकर्षण भी एक कारण होता है जिसके तहत शहर में पाई जाने वाली सुविधाओं, वहाँ की चकाचौंध भरी ज़िंदगी आकर्षित करती है. प्रवास के पीछे इन दो कारणों की अहम भूमिका होती है.

विकसित देशों में प्रवास का प्रचलित रूप महिलाओं को मूल स्थान पर छोड़ कर केवल पुरुष-प्रवसन होता है।[3] किंतु आधुनिक समय में एकल परिवार की प्रवृत्ति बढ़ने के कारण पति-पत्नी दोनों प्रवसन करते हैं। आज भी आंतरिक प्रवास में ये दोनों स्वरूप विद्यमान है, किंतु प्रवास-प्रक्रिया में पुरुष को मुख्य माना जाता है चाहे वह अपने पत्नी को साथ ले कर जा रहा हो या मूल स्थान पर छोड़ कर जा रहा हो। इस शोध-पत्र में मैं प्रवास में मूल स्थान पर छूट जाने वाली और गंतव्य पर जाने वाली दोनों श्रेणी की महिलाओं की अनदेखी से संबंधित मुद्दों को उठाने की कोशिश कर रही हूँ।

वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार अदृश्यता या इंविज़िबिलिटी का अर्थ 'नॉट इंक्लूडिड इन स्टेटिस्टिक' अर्थात् सांख्यिकी में शामिल न होने से है। प्रवास की प्रक्रिया में जब पुरुष प्रवास करता है तो महिला भी उसके साथ प्रवास करती है। जिस तरह पुरुष के साथ उसका सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन भी यात्रा करता है, उसी तरह महिला का भी। दोनों ही अपना मूल स्थान छोड़ते हैं। यदि दोनों में से कोई एक प्रवास करता है तो दूसरा उसके लिए सहयोग-सहायता प्रदान करने की भूमिका निभाता है। लेकिन जब सरकारी आँकड़ों में प्रवास को दर्शाया जाता है तो पुरुष की प्रतिशतता ज़्यादा दिखाई देती है और महिला को पुरुष पर आश्रित मान कर उसे द्वितीयक, सीमांत और अदृश्य कर दिया जाता है। यही बात महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कामों पर भी लागू होती है। वे मूल स्थान पर रह कर घरेलू काम करने के बाद खेतों में मज़दूरी करती हैं और प्रवास करने वाली महिलाएँ घरेलू नौकर, सिलाई-बुनाई जैसे छोटे-छोटे कार्य करके अर्थोपार्जन करती हैं। लेकिन इन कार्यों को सामाजिक-सांस्कृतिक भूमिका और घरेलू कामों का विस्तार मान कर अवैतनिक कार्यों की श्रेणी में डाल दिया जाता है। इस तरह उन्हें आँकड़ों से बेदख़ल कर अदृश्य बना दिया जाता है। सरकारी नीतियों का लाभ देने के लिए राज्य को अपने भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले लोगों की संख्या का आकलन करना होता है। जनगणना आकलन का एक ऐसा ही माध्यम है जिसके आँकड़ों से ज्ञात होता है कि कितने लोगों ने जन्म लिया है, कितने लोगों की मृत्यु हुई है और कितने लोग शहर में प्रवास करते हैं। जन्म और मृत्यु के बाद प्रवास तथा जनगणना के ज़रिये मनुष्य की गतिशीलता का पता लगाया जा सकता है।[4] अगर कोई महिला, समुदाय या व्यक्ति इसकी गिनती से बाहर हो जाता है तो वह सरकारी आँकड़ों और उसके दस्तावेज़ों तथा सरकार द्वारा मिलने वाले समस्त लाभों से भी वंचित हो जाता है। फलस्वरूप सार्वजनिक स्थानों और सेवाओं तक उनकी पहुँच नहीं बन पाती है। स्पष्ट रूप से जनगणना करते समय राज्य से बेहद सतर्कता की अपेक्षा रहती है।

## कार्य क्षेत्र, अध्ययन-प्रविधि और उद्देश्य

यह अध्ययन एम.फ़िल. के दौरान किये गये क्षेत्र-अध्ययन पर आधारित है। इसमें 2001 की जनगणना में प्रवास के आँकड़ों का विश्लेषण किया गया है। मैंने जनगणना करने वाली दो मुख्य संस्थाओं सेंसस और राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण द्वारा प्रवास के आँकड़ों तथा महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कामों के आँकड़े जमा करने की विधि और प्रश्नावली की पड़ताल की है। साथ ही उन विसंगतियों की जाँच भी की है जो जनगणना में देखने को मिलती हैं। प्रवास की ज़मीनी सच्चाई जानने के लिए मैंने उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ ज़िले के एक गाँव चक क़मरअली का अध्ययन किया है। जिन पचास महिलाओं को साक्षात्कार के लिए चुना था उनमें से पच्चीस महिलाएँ मूल स्थान पर रहने वाली थीं और बाक़ी पच्चीस पति के साथ शहर में प्रवास करने चली गयी थीं।

---

[3] शॉन मलिया कनैयोपुनी (2000).

[4] कुणाल केशरी और राम. बी.भगत (2013).

चक क़मरअली गाँव एक मिश्रित जाति-संरचना[5] वाला गाँव है जिसकी जनसंख्या 731 है। इनमें से 131 अनुसूचित जाति के, 225 अन्य पिछड़े वर्ग और 405 सामान्य जाति के हैं। अत: यह एक उच्च जाति के प्रभुत्व वाला गाँव है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में प्रवास ऐतिहासिक घटना रहा है जिसमें आज़मगढ़, जौनपुर, ग़ाज़ीपुर, बनारस आदि ज़िलों से सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद में बँधुआ मज़दूर के रूप में यहाँ के लोग प्रवसित होते रहे हैं।[6] बँधुआ मज़दूरी प्रतिबंधित होने के बाद इन ज़िलों से पश्चिम बंगाल की तरफ़ काफ़ी मात्रा में आव्रजन होता रहा है।[7] आजकल इस गाँव के उच्च जाति के पुरुष कोलकाता में प्रवास को ज़्यादा महत्त्व देते हैं। इस शहर में कई पीढ़ियों से यहाँ के लोग रहते आये हैं। लेकिन, निम्न जाति के पुरुष मुम्बई, दिल्ली, गुजरात और सूरत में रहते हैं। इनके प्रवास करने का मुख्य कारण यह है कि गाँव में रोज़गार नहीं मिलता। पिछड़े वर्ग के लोगों के पास कृषि योग्य भूमि नहीं है और उच्च जाति के लोगों को कृषि कार्य में लाभ नहीं मिलता। कई निम्न जातियों के पुरुष रोज़गार न होने पर भी अपने स्थानीय गाँव में शोषण और अवमानित होने के डर से उच्च जाति के खेतों में काम नहीं करना चाहते।[8] जनगणना, 2001 के अनुसार इस गाँव में महिलाओं की जनसंख्या 51.12% और पुरुषों का 48.81% है। सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि महिलाओं की संख्या ज़्यादा होने का कारण सकारात्मक लिंगानुपात नहीं बल्कि प्रवास है क्योंकि पुरुष अपनी विवाहित महिलाओं को छोड़कर रोज़गार के लिए शहर चले जाते हैं।

आँकड़ा-संग्रह के लिए मैंने अर्ध-सहभागी निरीक्षण,[9] गहन साक्षात्कार[10] और खुली प्रश्नावली[11] का प्रयोग किया है। तथ्य-संग्रहण के लिए प्रश्नावली का निर्माण इस आधार पर किया कि

**सरकारी आँकड़ों में ... महिला को पुरुष पर आश्रित मान कर उसे द्वितीयक, सीमांत और अदृश्य कर दिया जाता है। ... वे ... घरेलू काम करने के बाद खेतों में मज़दूरी करती हैं और प्रवास करने वाली महिलाएँ घरेलू नौकर, सिलाई-बुनाई जैसे छोटे-छोटे कार्य करके अर्थोपार्जन करती हैं। लेकिन इन कार्यों को सामाजिक-सांस्कृतिक भूमिका और घरेलू कामों का विस्तार मान कर अवैतनिक कार्यों की श्रेणी में डाल दिया जाता है। इस तरह उन्हें आँकड़ों से बेदख़ल कर अदृश्य बना दिया जाता है।**

---

[5] ब्राह्मण, भूमिहार, यादव, चमार, राजभर, गोस्वामी आदि जातियों के लोग रहते हैं.

[6] बद्री नारायण (2010).

[7] हरप्रसाद चट्टोपाध्याय (1989) : 323.

[8] अवमानना को यहाँ गोपाल गुरु के लेख के आधार पर समझा गया है. लेख के अनुसार जब व्यक्ति अपने अधिकारों की माँग करने में अक्षम होता है तो उत्पीड़क अपने वर्चस्व के जरिये उत्पीड़ित को गिरा हुआ, अभिशप्त और विकृत मान लेता है. ठीक इसी प्रकार गाँव में कई बार कमज़ोर जाति के लोगों को काम करने के बावजूद समय से मज़दूरी नहीं दी जाती और काम पर बुलाने के बाद न जाने पर गालियाँ और धमकियाँ दी जाती हैं. देखें, गोपाल गुरु (2005) : 91.

[9] गुडे और हाट ने सहभागी और असहभागी निरीक्षण के बीच एक अन्य प्रकार की विधि का सुझाव दिया है जिसे उन्होंने अर्ध-सहभागी अवलोकन या निरीक्षण का नाम दिया है. अर्ध-सहभागी निरिक्षण एक ऐसी विधि है जिसमें शोधकर्ता किसी समूह का बाहरी और आंतरिक दोनों प्रकार का सदस्य होता है. वह समूह की किन्हीं क्रियाओं में सक्रिय रूप में भाग लेता है तो कहीं एक दर्शक-श्रोता बन कर एक तटस्थ अवलोकनकर्ता बन जाता है. विलियम वाइट ने अपने प्रसिद्ध अध्ययन *नुक्कड़ का समाज (स्ट्रीट कॉर्नर सोसाइटी)* में इसी अध्ययन-विधि का प्रयोग किया है. हरिकृष्ण रावत ( 2013) : 263.

[10] असंरचित साक्षात्कार का विशिष्ट रूप गहन साक्षात्कार है, किंतु इसकी प्रकृति साधारण असंरचित साक्षात्कार से थोड़ी भिन्न होती है. इसमें प्रश्नोत्तर का कोई निश्चित ढाँचा नहीं होता, अपितु उसे शोध-विषय से संबंधित बातों को कहने के लिए उकसाया जाता है. इसका प्रयोग तब किया जाता है जब शोधकर्ता उद्देश्य सूचनादाता की दबी हुई भावनाओं, आकांक्षाओं अथवा विचारों को जानने का होता है और शोधकर्ता की भूमिका ऐसे साक्षात्कार के दौरान एक अच्छे और सहानुभूति से भरे श्रवणकर्ता की होती है. वही : 274-275.

[11] जिन प्रश्नावलियों में सूचनादाता को उत्तर देने की पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती है, उन्हें मुक्त या खुली प्रश्नावली कहते हैं. इस प्रकार के प्रश्नों की यह विशेषता होती है कि इनके द्वारा प्राप्त उत्तर स्वतंत्र होने के साथ-साथ स्वत:स्फ़ूर्त होते हैं. इन्हें सूचनादाता के भावों के अधिक निकट माना जा सकता है. वही : 291.

जनगणना के आँकड़ों में प्रवसित महिलाओं की दर कम क्यों दिखाई देती है? सेंसस और राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण की रिपोर्ट में महिला के प्रवास का मुख्य कारण विवाह दर्ज किया गया है जबकि उनके प्रवास के अनेक कारण होते हैं। इन तथ्यों को स्पष्टता से दर्ज करने के लिए इन दोनों संगठनों को अपनी तथ्य संकलन प्रश्नावली में महिलाओं के विवाह के पहले और बाद में काम करने, घर से जुड़े कार्य करने जैसे संबंधी प्रश्नों को जगह देनी चाहिए। तालिका–2 में जनगणना संबंधी आँकड़ों को देख कर यह समझा जा सकता है। ऐसा करने से महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता और उनके पति पर आश्रित होने तथा प्रवास का मुख्य कारण ज्ञात हो सकेगा। सांख्यिकी प्रतिनिधित्व अब तक प्रतिनिधित्व करने के सबसे शक्तिशाली रूप में उभर रहा है जो वास्तव में सामाजिक, शारीरिक और प्राकृतिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने के लिए दुनिया का निर्माण करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।[12] इस तरह राज्य द्वारा अपनी जनता को गिनने और उसे छोड़ने में प्रत्यक्ष भूमिका निभाई जाती है। महिलाओं के प्रति पितृसत्तात्मक रवैया अपना कर उन्हें मुख्यधारा से अलग कर दिया जाता है जिस फ़ूको द्वारा प्रतिपादित शासकीयता अर्थात गवर्नमेंटलिटी की अवधारणा से समझा जा सकता है। इस विचार के तहत राज्य अपनी आबादी की गतिविधियों पर नज़र रखने के साथ–साथ उन्हें अक्षम बता कर उस पर नियंत्रण करने की कोशिश करता है।[13]

यह लेख दो भागों में है। पहले भाग में सेंसस और राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आँकड़ा इकट्ठा करने की प्रणाली तथा प्रश्नावली का विश्लेषण किया गया है। इसमें यह पड़ताल की गयी है कि किस प्रकार महिलाएँ राज्य की एजेंसियों द्वारा परिभाषित श्रम के मानकों— जैसे वैतनिक और अवैतनिक श्रेणियों में क़ैद हो कर रह जाती हैं, जबकि वे अपने प्रवसित पति के लिए सहायता उपलब्ध कराने का आधार बनने का काम करती हैं। घर की आय में उनकी भागीदारी रहती है फिर भी वे मूल रूप से गृहिणी ही मानी जाती हैं और उनके द्वारा किये जाने वाले कार्य को सामाजिक–सांस्कृतिक कर्तव्य मान लिया जाता है। लेख का दूसरा भाग प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित है जिसमें पचास महिलाओं से बातचीत की गयी है। इसके बाद इन दोनों श्रेणियों की महिलाओं के जीवन–वृतांत के माध्यम से यह बताया गया है कि किस प्रकार उनका जीवन राज्य–निर्मित अभिलेखों से ग़ायब कर दिया जाता है। इसमें से एक श्रेणी की महिलाएँ मूल स्थान पर रहने वाली हैं और दूसरा मामला गंतव्य पर जाने वाली महिला का है। महिलाएँ दोनों तरह से, चाहे मूल स्थान पर हो या प्रवसित हुई हो, एक मुख्य भूमिका निभाती है। पति के साथ प्रवास करने वाली महिलाएँ घर के कामों के साथ आर्थिक उत्पादन करते हुए ज़िम्मेदारी का दोहरा बोझ वहन करती हैं जबकि उन्हें प्रवास में पति पर आश्रित मानकर वैवाहिक प्रवास की श्रेणी में डाल दिया जाता है। प्रवास में महिलाओं की, चाहे वह अपने पति के साथ जाती है या मूल स्थान पर ही रहती हो सरकारी आँकड़ें में उनकी उपस्थिति दर्ज नहीं की जाती। उन्हें पति द्वारा भेजे जाने वाले पैसे पर आश्रित माना लिया जाता है और भेजी गयी रक़म[14] को उनकी जीविका का मुख्य साधन माना जाता है।[15] प्रवसित महिलाओं से मेरी बातचीत गाँव में दीपावली (अक्टूबर, 2015) व होली (मार्च, 2016) तथा किसी वैवाहिक या सांस्कृतिक प्रयोजन के समय हुई है। गाँव में रहने वाली महिलाओं से मैं लगातार बात करती रही हूँ। इस अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि सरकारी संस्थाएँ प्रवास की अवधि के दौरान महिलाओं के श्रम की किस तरह अनदेखी करती हैं, किसे महत्ता प्रदान करती हैं और लोगों को कैसे गिनती हैं तथा प्रवास से महिलाओं का जीवन कैसे प्रभावित होता है?

---

[12] तलाल असद (1994) : 78. असद कहते हैं कि आँकड़े आधुनिक राज्य के लिए सबसे सशक्त भाषा की तरह होते हैं. ये किसी के भी जीवन को परिवर्तित कर सकते हैं.

[13] समाज विज्ञान विश्वकोश (2013), खण्ड 6 : 2005.

[14] प्रवासी द्वारा भेजे गये पैसे के लिए अंग्रेज़ी में बहुचर्चित शब्द रेमिटेंस प्रयोग किया जाता है. लेख में कहीं भी भेजे गये पैसे, रक़म या धन का अर्थ रेमिटेंस से ही लिया जाए.

[15] प्रिया देशिंग्कर, सुशील कुमार (2003), रवि श्रीवास्तव (2011).

**अवधारणात्मक संरचना**

प्रवास को सांस्कृतिक विकास, सामाजिक संगठन और दूसरे देशों में व्यापार करने के संदर्भ में देखा जा सकता है।[16] भारतीय संस्कृति में प्रवास की दर कम रही है जिसका मुख्य कारण यहाँ की जाति व्यवस्था, स्थानीय संस्कृति, सामाजिक मूल्य, संयुक्त परिवार, कम शिक्षा आदि हैं।[17] औपनिवेशिक समय में बँधुआ मज़दूर के रूप में भारतीय महिलाओं और पुरुषों के सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना जैसे देशों में प्रवसन का चलन देखने को मिलता है, किंतु आतंरिक प्रवास के संदर्भ में देखें तो यह दर 1990 के दशक तक कम ही रही है,[18] लेकिन उदारतावाद, निजीकरण, और वैश्वीकरण के समय में संचार साधनों का प्रयोग बढ़ने से प्रवास के प्रचलन और तरीक़े में काफ़ी बदलाव आया। अंतर्राष्ट्रीय प्रवास के साथ आंतरिक प्रवास में वृद्धि हुई, परिवहन और संचार के साधनों में विकास के फलस्वरूप शिक्षा की दर में वृद्धि हुई जो प्रवास की दर में वृद्धि का मुख्य कारण माना जाता है।[19] प्रवास को प्रारम्भ से पुरुषों से संबंधित परिघटना माना जाता रहा है। भारतीय संस्कृति में महिलाओं के लिए शारीरिक पवित्रता का विचार उनकी गतिशीलता पर नियंत्रण लगा देता था। सामाजिक और धार्मिक नियमों ने अलग-अलग उम्र की महिलाओं के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित किये हैं। सीमंथनी ने अपने अध्ययन में बताया है कि यौवनारम्भ के बाद लड़की का अन्य घरों में आना-जाना संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। इसका उपयोग लड़की की यौनिकता को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। शादी होने से पूर्व और यौवनारम्भ की अवधि के बीच का समय महिला के जीवन में महत्त्वपूर्ण समय माना जाता है। नैतिक मूल्यों के कारण उन्हें कामुकता के बारे में बात करने की अनुमति नहीं होती और उन्हें जीवन व्यतीत करने के लिए विभिन्न निर्देशों द्वारा नियंत्रणों का पालन करना होता है।[20]

**प्रवास करने वाली महिलाएँ घर के कामों के साथ आर्थिक उत्पादन करते हुए ज़िम्मेदारी का दोहरा बोझ वहन करती हैं जबकि उन्हें प्रवास में पति पर आश्रित मानकर वैवाहिक प्रवास की श्रेणी में डाल दिया जाता है। महिलाओं की, चाहे वह अपने पति के साथ जाती है या मूल स्थान पर ही रहती हो, सरकारी आँकड़े में उनकी उपस्थिति दर्ज नहीं की जाती। उन्हें पति द्वारा भेजे जाने वाले पैसे पर आश्रित मान लिया जाता है और भेजी गयी रक़म को उनकी जीविका का मुख्य साधन माना जाता है।**

गतिशीलता पर नियंत्रण के कारण प्रवास में महिलाओं की उपस्थिति शुरुआत में कम रही है। महिलाओं को प्रवास में प्रभावशाली समूह के रूप में नहीं देखा गया है, बल्कि उनके लिए प्रवासी मज़दूर या आजकल सर्वाधिक प्रचलित शब्द फ़ेमिनाइजेशन ऑफ़ लेबर[21] (श्रम का स्त्रीकरण) का प्रयोग किया जाता रहा है। दरअसल, प्रवास में महिलाओं की अदृश्यता समझने के लिए प्रवासी स्त्री से संबंधित चरों को ले कर अध्ययन करना होगा, नारीत्व के सामाजिक ढाँचे और बुनावट तथा उसके प्रभाव, जेंडर-अंतराल और सरकारी तथा ग़ैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्रयोग किये जाने वाली अध्ययन-प्रविधि और प्रश्नावलियों पर ध्यान देने की आवश्यकता है। सांस्कृतिक संरचना के कारण पुरुष को

[16] राम.बी. भगत (2016).
[17] किंग्सले डेविस (1951).
[18] अमिताभ कुण्डू और शालिनी गुप्ता (1996).
[19] राम.बी. भगत (2010).
[20] लीला दुबे (1988) : 11-19. ; सिमंथनी (2001).
[21] श्रम के स्त्रीकरण का उदय वैश्विक पूँजीवाद से हुआ है जिसका तात्पर्य उभरते लैंगिक श्रम संबंधों से है. यह कार्यस्थल और श्रम-शक्ति का नारीकरण है, जो महिलाओं के अधिक से अधिक रोज़गार की दिशा में बढ़ने की प्रवृत्ति से ताल्लुक़ रखता है.

चौराहों पर खड़े होकर अपना श्रम बेचने का अधिकार है,[22] किंतु महिलाओं का चौराहे पर खड़ा होना अनैतिक माना जाता है तथा इसे वेश्यावृत्ति से जोड़ कर देखा जाता है। समाज-विज्ञानियों ने मुख्यधारा के प्रवास को आर्थिक संरचना के स्थानांतरण के रूप में प्रस्तुत किया है जो समाज के एक तबक़े के लिए बहुत लाभदायक है। जैसे मज़दूरों की माँग और आपूर्ति को आर्थिक विकास की भूमिका में एक मुख्य तत्त्व के रूप में देखा जाता है, [23] जबकि अब प्रवास अर्थशास्त्र से ज़्यादा संस्कृति, इतिहास और जेंडर-जीवन की पड़ताल करने वाले विषय के रूप में उभर रहा है। प्रवास एक ऐसी परिघटना है जिससे सामाजिक दूरी कम होती है। शहरों में प्रवसित लोग अलग-अलग जगहों से आते हैं और वहाँ गाँव की अपेक्षा जाति और वर्ग के भेद-भाव कम मिलते हैं। अभी तक के प्रवास-अध्ययनों में महिलाओं के प्रवास को केवल विवाह के संदर्भ में ही महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक कारक दर्शाया जाता रहा है, आर्थिक कारक में उनकी प्रतिशतता बहुत कम रही है। उन्हें स्वतंत्र सामाजिक इकाई के रूप में नहीं देखा जाता है, जबकि प्रवास महिलाओं के लिए जेंडर स्पेस मुहैया कराने वाली प्रक्रिया के रूप में भी उभर रहा है।

## महिलाओं की अनदेखी का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

किसी व्यक्ति के अदृश्य होने की प्रक्रिया कई चरणों में पूर्ण होती है। महिलाओं के संबंध में देखा जाए तो प्रवासी महिलाएँ और उनके द्वारा किये जाने वाले कार्यों को गणना में शामिल न करके सरकारी संगठन उनकी भूमिका को नकारने का काम करते हैं जिससे उनकी अस्मिता की वैधता संकटग्रस्त होने लगती है। [24] यह इसलिए होता है क्योंकि राज्य इन्हीं संगठनों द्वारा जुटाए गये आँकड़ों के आधार पर कल्याणकारी योजनाएँ तैयार करता है। इस तरह, महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यों और प्रवास में उनकी उपस्थिति न दर्ज करके ये संगठन उन महिलाओं को सरकारी योजनाओं से बाहर कर देते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि वे प्रवास की मुख्यधारा से अलग-थलग पड़ जाती हैं और सार्वजनिक जीवन[25] का हिस्सा नहीं बन पाती। उनकी आवाज़ों को जनतांत्रिक स्पेस नहीं मिल पाता और सरकार उनसे बात किये बग़ैर ही उनकी ज़रूरतें तय करने लगती है। किसी व्यक्ति, समुदाय या समाज के अदृश्य होने का मुख्य कारण यही होता है।[26]

महिलाओं की अनदेखी के कई स्तर होते हैं। घर के स्तर पर उनके द्वारा किये जाने वाले कार्य को घरेलू और सांस्कृतिक भूमिका मान कर उसे सहायक काम की श्रेणी में रखना इस अनदेखी का प्रथम स्तर है।[27] इसी तरह महिलाएँ स्वास्थ्य, शिक्षा और पहचान के स्तर पर अदृश्य रहती हैं क्योंकि भारतीय सांस्कृतिक संरचना में गृहिणी घर के पुरुष-सदस्यों के बाद ही खाना खाती है। इसका उनके

---

[22] चौराहों पर खड़े होकर श्रम बेचने से लेखक का अर्थ श्रमिक-चौराहे से है जो तक़रीबन हर शहर में पाया जाता है। यहाँ प्रत्येक सुबह बड़ी संख्या में श्रमिक खड़े रहते हैं और जिन्हें उनकी ज़रूरत होती है वे उसी चौराहे पर आ कर उन्हें ले जाते हैं. इस संबंध में गोविंद बल्लभ पंत सामाजिक संस्थान में हुए शोध कार्य को देखा जा सकता है.

[23] दीपक कुमार मिश्र (2016).

[24] हैबरमास (1973).

[25] सार्वजनिक दायरे या लोक-वृत्त से मेरा तात्पर्य हैबरमास के पब्लिक स्फ़ियर से है. इसका शाब्दिक अर्थ 'प्रचार' है जो यह दर्शाता है कि हमारे सभी क्षेत्रों में एक सामाजिक दायरा होता है जिसका जनमत से गठन किया जाता है और जिस तक सभी नागरिकों की पहुँच सुनिश्चित होनी चाहिए. सार्वजनिक दायरे का एक हिस्सा व्यक्तियों को इकट्ठा करके सार्वजनिक निकाय बनाता है जिसे 'जनता' के समान नहीं माना जाता बल्कि जो व्यक्ति इकट्ठा होते हैं उनकी अवधारणा के बजाय संस्थान में निर्देशित किया जाता है, जहाँ सभी की समान भागीदारी होनी चाहिए. इस प्रकार हैबरमास का सार्वजनिक दायरा सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन लाने के विचार पर आधारित है. यह समाज और राज्य के बीच मध्यस्थता करता है, जिसमें सार्वजनिक वाहक या जनमत के रूप में राज्य की अनैतिक गतिविधियों पर लोकतांत्रिक नियंत्रण लगा सकता है. हैबरमास (1964).

[26] बद्री नारायण (2016).

[27] कार्यों में लैंगिक भेद सामाजिक विचारधारा के रूप में किया गया है. आर्थिक उत्पादन से देश के सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि होती है. इसे महिला और पुरुष दोनों करते हैं. पुरुष घर के बाहर फैक्ट्रियों या खेतों काम करते हैं जो कुशल कार्य की श्रेणी में आता है और जिसके लिए उन्हें पैसा मिलता है, किंतु महिलाओं के कामों को घर के कार्यों का विस्तारित रूप मान लिया जाता है. घर के कामों के कम महत्त्व

शरीर पर कुप्रभाव पड़ता है क्योंकि एक तरह से उन्हें बचा हुआ खाना मिलता है। पहचान के स्तर पर देखा जाए तो भारतीय समाज में महिला की पहचान किसी पुरुष के सापेक्ष ही देखी जाती है। प्रवास महिलाओं के लिए एक ऐसा साधन है जो उन्हें नयी पहचान दे सकता है। जैसा कि मीनाक्षी थापन कहती हैं, किसी भी व्यक्ति की पहचान उसके आस-पास के समाज और पर्यावरण पर निर्भर करती है। वह लचीली होती है और सामाजिक-सांस्कृतिक माँग के साथ परिवर्तित होती रहती है।[28] अत: प्रवास के अध्ययन में महिलाओं की पहचान शामिल करने के लिए उनके अनुभवों को भी शामिल करना ज़रूरी है ताकि प्रवास को जेंडर की दृष्टि से एक संतुलित प्रक्रिया बनाया जा सके।

प्रवासी महिलाएँ और उनके ... कार्यों को गणना में शामिल न करके सरकारी संगठन उनकी भूमिका को नकारने का काम करते हैं जिससे उनकी अस्मिता की वैधता संकटग्रस्त हो जाती है। यह इसलिए होता है क्योंकि राज्य इन्हीं संगठनों के आँकड़ों के आधार पर कल्याणकारी योजनाएँ बनाता है। इस तरह ... कार्यों और प्रवास में उनकी उपस्थिति न दर्ज करके ये संगठन उन महिलाओं को सरकारी योजनाओं से बाहर कर देते हैं। इसके चलते वे प्रवास की मुख्यधारा से अलग हो कर सार्वजनिक जीवन का हिस्सा नहीं बन पातीं।

महिलाओं की अनदेखी केवल वर्तमान राज्य की बात नहीं है, बल्कि इसकी जड़ें भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परम्पराओं, रीति-रिवाजों व धार्मिक ग्रंथों में हैं। मानव-इतिहास पर दृष्टिपात करें तो पता चलता है कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं का लिखित इतिहास बहुत कम है। इतिहास किसी भी समुदाय के मुख्यधारा में होने की प्रथम शर्त है।[29] प्रवास का ऐतिहासिक विश्लेषण करें तो बँधुआ प्रवास में महिलाओं के जीवन का कम विवरण मिलता है। ब्रिटिश सरकार द्वारा दास-प्रथा पर रोक लगाने के परिणामस्वरूप कैरिबियाई देशों (सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद) में श्रम आपूर्ति के लिए चीन, भारत, इंडोनेशिया, वेस्ट इंडीज से मज़दूरों का व्यापार शुरू किया गया जिसमें भारतीय पुरुष को उनकी कार्यशैली, उसकी अनुकूलन क्षमता और गन्ने की खेती का अनुभव के कारण प्राथमिकता दी जाने लगी। उन्हें पाँच साल की संविदा पर ले जाया जाता था जिसे टिंकर ने ग़ुलामी प्रथा का नया स्वरूप कहा है।[30] कुछ समय बाद डच सरकार ने महिलाओं को बँधुआ मज़दूर के रूप में ले जाने की उत्सुकता दिखाई जिसका मुख्य कारण वहाँ रहने वाले पुरुषों की यौनिक ज़रूरतों को पूरा करना था।[31] डच सरकार की महिला भर्ती की उत्सुकता मज़दूरों से संबंधित मूल्य दरों में दिखाई देती है। शुरुआती दिनों में महिला भर्ती के लिए अरकटिया (मिडिल मेन/वुमॅन) को सात-आठ रुपये दिये जाते थे और बाद में यही दर 33-40 रुपये तक पहुँच गयी जबकि पुरुषों के लिए यह घट कर 28 रुपये हो गयी थी। साथ में, उन्हें निचले तबक़े की महिलाओं की भर्ती करने को कहा जाता था।[32] बाद में जब गंतव्य

दिया जाता है. पुनरुत्पादन दो प्रकार के होते हैं— एक जैविक और दूसरा सामाजिक. जैविक कार्य बच्चों को जन्म देना है जिसे केवल महिलाएँ ही कर सकती हैं तथा सामाजिक पुनरुत्पादन में उसे बच्चे का पालन-पोषण, परिवार को खाना खिलाना, कपड़े धोना और सफ़ाई करना होता है. मनुष्य के जीवित रहने के लिए यह ज़रूरी है, लेकिन इस कार्य को अवैतनिक और घरेलू कार्य की संज्ञा देकर नकार दिया जाता है. तीसरा सामुदायिक कार्य होता है जिसमें सामाजिक और सांस्कृतिक सेवा के लिए महिला और पुरुष दोनों भाग लेते है. कमला भसीन (1990) : 33-34.

[28] मीनाक्षी थापन (2005 ) : 29.

[29] गर्डा लर्नर (1986).

[30] ह्यूज टिंकर (1993).

[31] रोज़मरिन होएफ़्ते (1887), रोडा रेडोक (1994).

[32] रोडा रेडोक (1994), रोजमरिन होएफ़्ते (1987).

स्थान पर महिलाओं से संबंधित आत्महत्याएँ और हत्याएँ जैसी घटनाएँ होने लगीं तो डच सरकार पारिवारिक प्रवास और अच्छे आचरण वाली महिलाओं की माँग करने लगी।[33] इस तरह देखा जा सकता है कि प्रवास शुरू से ही पितृसत्तात्मक व्यवस्था की ज़रूरत के अनुसार परिभाषित होता रहा है।

### आँकड़ों में महिलाओं की अनदेखी

महिलाओं की अनदेखी की बात सत्तर के दशक से ही शुरू हो गयी थी। उस समय समाजशास्त्री श्यामाचरण दुबे ने पूछा था कि स्त्रियाँ विकास करने की अपेक्षा हाशिये पर क्यों जा रही हैं? सरकारी नियोजक इस ग़लतफ़हमी में रहते हैं कि योजनाओं का लाभ पूरे समुदाय को मिलेगा। विकासशील देशों की सरकारों की यह सोच है कि विकास का यह लाभ रिस कर बहुसंख्यक ग़रीबों तक पहुँचेगा, लेकिन ऐसा नहीं होता।[34] प्रवास के शास्त्रीय सिद्धांत में प्रवास एक तार्किक निर्णय होता है जो किसी भी स्थान पर श्रम की माँग और पूर्ति से संबंधित होता है, लेकिन यह सिद्धांत जेंडर-तटस्थ है। प्रवास का प्रभाव पुरुष और महिला पर भिन्न-भिन्न होता है क्योंकि दोनों का सांस्कृतिक और सामाजिक दायित्व भिन्न होता है। प्रवास में जेंडर जागरूकता ज़रूरी है क्योंकि महिला और पुरुष की सांस्कृतिक भूमिका अलग-अलग होती है। पुरुषों के साथ प्रवास करने वाली महिलाओं के प्रवास को व्यक्तिगत रूप में न देख कर उसे घरेलू प्रवास में तब्दील कर दिया जाता है। बाद में प्रवासीय सिद्धांत में महिलाओं को शामिल तो कर लिया गया लेकिन उनकी भूमिका को आधुनिकता के प्रश्न तक ही सीमित रखा गया, जबकि इसे नारीवादी दृष्टिकोण से खँगालने की ज़रूरत थी। जेंडर से प्रवसित महिलाओं की उपयोगिता और उपलब्धि की अनदेखी पर सवाल उठते हैं। प्रवास से महिलाओं और पुरुषों की आकांक्षाएँ अलग-अलग जुड़ी होती हैं। प्रवास का महिलाओं और पुरुषों पर अलग प्रभाव पड़ता है— यह अभी तक के प्रवास-अध्ययन में कम दर्ज किया गया है। महिलाओं के स्वास्थ्य, प्रवास, कार्य, पोषण, जनन-क्षमता जैसे ख़ास पहलुओं के संबंध में हमें अभी और स्पष्ट और सटीक आँकड़ों की ज़रूरत है।

प्रवास संबंधी आँकड़ों में महिलाओं की अदृश्यता का कारण यह है कि उनकी आवाज़ को सुना नहीं जाता। निक काउल्ड्री कहते हैं कि व्यक्ति के पास आवाज़ का होना ही पर्याप्त नहीं होता। उसे अपनी आवाज़ दूसरों तक पहुँचाने की तकनीक भी आनी चाहिए।[35] महिलाओं को अपनी आवाज़ और अपने कार्य के महत्त्व को समझने की आवश्यकता है क्योंकि वे खुद को एक वर्कर के रूप में पहचानती ही नहीं। जैसे एक महिला कहती है कि— *ई केहू दुसरे का काम त ना ह, अपना काम है, पईसा तो आदमी कमात है हम तो दिन भर घर में रहत हई* (घर का काम तो अपना काम है ...पैसे तो आदमी कमाते हैं। हम दिन भर घर में रहते हैं।)। महिलाओं को अपने कामों और पहचान के प्रति जागरूक होने की ज़रूरत है। श्रम के लैंगिक विभाजन के बावजूद ज़्यादातर महिलाएँ काम के बोझ से दबी रहती हैं। उनका दिन सुबह पाँच बजे शुरू हो जाता है। घर के कामों के बाद दोपहर में खेती का काम शुरू हो जाता है और उसके बाद शाम को घर के काम, रसोई तैयार करने, बर्तन धोने जैसे कामों में लग जाती हैं। आदमी घर में होने के बावजूद इन कामों में हाथ नहीं बँटाते क्योंकि ऐसे तमाम कार्य उन्हें स्त्रैण लगते हैं। सभी घरों, समुदायों और समाजों में धुलाई (कपड़ा, बर्तन, घर) को महिलाओं का काम माना जाता है जिसे करने से पुरुषों के पुरुषत्व की हेठी होती है। मर्द के काम को

[33] तेजस्विनी निरंजना (2006) : 61.

[34] श्यामाचरण दुबे (1995) : 27.

[35] निक काउल्ड्री (2010) : 1.

पुंसत्व युक्त माना गया है और स्त्री के काम को पुंसत्वहीन। यहाँ पुंसत्व और नपुंसकता की धारणाएँ पुरुष की यौनिक उर्जा और स्त्री की यौनिक दासता से जुड़ी हुई मानी जाती हैं और इसी कारण दोनों के वेतन में अंतर पाया जाता है। पुरुष का श्रम महँगा और महिला का श्रम सस्ता होता है।[36] महिलाएँ इन परम्पराओं को आत्मसात् कर लेती हैं। तभी तो सुशीला (30) कहती है कि *मरद के मेहरारू से जादा दुनियादारी पता रहेले उ बाहर दस आदमी में उठे बिठेले और दस तरह के लोगन से मिलेल* (पुरुषों को महिलाओं से ज़्यादा दुनियादारी का पता होता है क्योंकि वे रोज़मर्रा की जिंदगी में कई तरह के लोगों से मिलते और बातचीत करते हैं)।[37]

**अदृश्यता का कारण यह है कि उनकी आवाज़ को सुना नहीं जाता। ... व्यक्ति के पास आवाज़ का होना ही पर्याप्त नहीं होता। उसे अपनी आवाज़ दूसरों तक पहुँचाने की तकनीक भी आनी चाहिए। ... अपनी आवाज़ ... के महत्त्व को समझने की आवश्यकता है क्योंकि वे खुद को एक वर्कर के रूप में पहचानती ही नहीं। ... महिलाओं को अपने कामों और पहचान के प्रति जागरूक होने की ज़रूरत है। श्रम के लैंगिक विभाजन के बावजूद ज़्यादातर महिलाएँ काम के बोझ से दबी रहती हैं।**

### राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण द्वारा प्रयुक्त प्रश्नावली

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण प्रवास के आँकड़े 'निवास के आख़िरी सामान्य जगह' के आधार पर इकट्ठा करता है जिसमें प्रवास करने के कारण के कई विकल्प दिये गये हैं।[38] महिलाएँ दो बार प्रवास करती हैं। उनका पहला प्रवास विवाह के समय होता है और दूसरी बार वे अपनी ससुराल से पति के साथ किसी शहर में प्रवास करती हैं। लेकिन, यह सांख्यिकी में नहीं आता। इसे भी विवाह संबंधी प्रवास मान लिया जाता जाता है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण ने महिलाओं के लिए प्रवास का बस एक कारण विवाह अपनी प्रश्नावली में रखा है लेकिन ज़्यादातर दलित महिलाएँ जब भी अपने पति के साथ प्रवास करती हैं तो वे अपने गंतव्य स्थान पर आर्थिक उत्पादन का कार्य भी करती हैं और साथ में घर के बाक़ी काम भी चलते रहते हैं। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यों को वैचारिक आधार पर नकारता है। उसके अनुसार महिलाएँ सर्वप्रथम गृहिणी हैं। उनके द्वारा किया जाने वाला कार्य सीमांत और द्वितीयक है। आँकड़े इकट्ठा करने की व्यवस्था इस तरह निर्मित की गयी है कि महिलाओं द्वारा किये जाने वाले आर्थिक कार्य को मापने का पैमाना ही विकसित नहीं किया गया है। उनके द्वारा कमाया हुआ पैसा द्वितीयक होता है और पति द्वारा भेजा हुआ पैसा प्रथम स्रोत माना जाता है।

निम्न तालिका में प्रवास की प्रक्रिया में जेंडर का अंतराल दर्शाया गया है। क़रीब 56 प्रतिशत पुरुषों ने प्रवास के लिए रोज़गार को और 25 प्रतिशत ने पारिवारिक कारण बताया है। महिलाओं में 61 प्रतिशत प्रवास का कारण वैवाहिक है, किंतु ज़मीनी स्तर पर यह सही नहीं है। महिलाओं के प्रवास के कारण वैवाहिक नहीं बल्कि आर्थिक भी होते हैं *(हम लोग के बिरादरी में न मैडम लरिकपन से ही काम*

[36] कांचा ऐलैया (2009) : 79.

[37] फ़ील्ड डायरी (2015).

[38] 1. रोज़गार की तलाश में, 2. अच्छे रोज़गार की तलाश में, 3. व्यापार के लिए, 4. नया रोज़गार लेने के लिए / अच्छा रोज़गार, 5. नौकरी में स्थानांतरण/ संविदा, 6. काम के स्थान निकट होने से, 7. शिक्षा , 8. प्राकृतिक आपदा (सूखा, बाढ़ , सुनामी, इत्यादि.), 9. सामाजिक / राजनीतिक समस्या (दंगा, आतंकवाद, राजनीतिक शरणार्थी, ख़राब क़ानून और व्यवस्था इत्यादि), 10.विकास परियोजनाओं के तहत विस्थापन, 11. अपने घर / फ़्लैट का अधिग्रहण 12. घरेलू समस्या, 13. स्वास्थ्य, 14. सेवानिवृत्ति के बाद, 15. विवाह, 16.अन्य.

*करे लगत है जैसे बड़ी जाति के त दस पठौनी (शादी के बाद मायके से ससुराल आने-जाने को) तक न कुछ पता होत है लेकिन हम सबन के बिरादरी में पठौनी आयो नाही के खेत देख ला। हम सब नयीहर में भी काम करत है और ससुरे में भी)* यानी, हमारी जाति में तो बचपन से ही काम करते हैं जैसे उच्च जातियों में शादी के कई वर्ष बाद भी बहू को खेत के बारे में नहीं पता होता है लेकिन हमारी जाति में शादी के तुरंत बाद खेत-खलिहान दिखा दिया जाता है। हम सब मायके और ससुराल दोनों स्थानों पर काम करते हैं। विवाह के समय होने वाले प्रवास को श्रम का स्थानांतरण समझा जाना चाहिए क्योंकि अगर दलित लड़कियाँ शादी के पहले अपने खेतों में काम करती हैं और शादी के बाद ससुराल में खेतों में काम करके आर्थिक उत्पादन करती हैं तो इसको वैवाहिक कारण के साथ आर्थिक कारण माना जाना चाहिए। यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि किसी समूह या समुदाय के सही और सटीक आँकड़े इकट्ठा करने के बाद ही सही नीतियों का निर्माण किया जा सकता है। ग़लत आँकड़े एक विकसित समाज के मनुष्यों के जीवन-जगत को प्रभावित करते हैं।

**तालिका-1**
**गाँवों से शहर की ओर प्रवास**[39]

| प्रवास के कारण | शहरों में प्रवास | |
|---|---|---|
| | महिला | पुरुष |
| रोज़गार संबंधित कारण | 2.7 | 55.7 |
| शिक्षा | 2.2 | 6.8 |
| विवाह | 60.8 | 1.4 |
| माता-पिता/परिवार के साथ | 29.4 | 25.2 |
| अन्य | 4.9 | 10.9 |
| कुल | 100 | 100 |

स्रोत : राम.बी.भगत (2011) : 34

यहाँ एक उदाहारण से यह स्पष्ट हो जाएगा कि आँकड़े इकट्ठा करते समय जो प्रश्नावली बनाई जाती है उस पर ध्यान देने की ज़रूरत है और आँकड़ा इकट्ठा करने के लिए जाने वाले व्यक्तियों की जेंडर ट्रेनिंग भी ज़रूरी है। जनगणना में अपना रोज़गार बदलने से संबंधित सवाल नहीं पूछा जाता जबकि राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण में इससे संबंधित प्रश्न किये जाते हैं। इसके लिए कुछ कारण दर्शाए जाते हैं[40] जिनमें महिलाओं से संबंधित समस्याएँ और बातें खुलकर सामने नहीं आ पातीं। यहाँ एलीना सामंथ और धान्या[41] का अनुसंधान देखा जा सकता है। इससे पता चलता है कि लिंग संबंधित आँकड़े अन्य देशों में कैसे इकट्ठा किये जाते हैं। उदाहरण के लिए, स्वीडन में यह तथ्य जानने पर ज़ोर दिया जाता है कि नौकरी छोड़ने या महिलाओं की श्रम में अल्प भागीदारी का मुख्य कारण क्या है? इसके लिए उनमें जेंडर से जुड़े विकल्प भी उपलब्ध कराए जाते हैं जिससे महिलाओं से जुड़ी समस्याएँ सामने आती हैं।[42] यदि इस प्रश्नावली के साथ भारत में होने वाले सर्वे का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो स्वीडन की महिलाओं और पुरुषों की श्रम में अल्प भागीदारी से संबंधित आँकड़ा और स्पष्ट

[39] तालिका के लिए देखें, राम.बी. भगत (2016).

[40] छँटनी / ले-ऑफ़, 1. यूनिट का समापन, 2. बेहतर आय / पारिश्रमिक, 3. नौकरी में असंतुष्टि, 4. उद्यम में काम की कमी (स्वयं-नियोजित के लिए), 5. नौकरी की सुरक्षा की कमी, 6. कार्यस्थल बहुत दूर, 7. पदोन्नति / स्थानांतरण, 8. अन्य, 9.(एनएसएसओ, 66वाँ चक्र, 2009-10).

[41] एलीना सामंथ रॉय और धान्या एम.बी. (2012).

[42] (अ) कम्पनी का बंद होना, (ब) मौसमी रोज़गार, (स) बच्चों और बुजुर्गों का ख़्याल रखने के लिए, (द) अन्य व्यक्तिगत और पारिवारिक कारण, (ध) स्वास्थ्य संबंधी कारण, (न) शिक्षा, (प) कार्य का असंतोषजनक वातावरण, (फ) ख़राब परिवहन सुविधा,

होकर सामने आता है क्योंकि वहाँ महिलाओं से जुड़े कामों (*बच्चों और बुज़ुर्गों के देखभाल के लिए, अन्य व्यक्तिगत और पारिवारिक कारण*) का भी ज़िक्र किया गया है और स्वास्थ्य को भी स्थान दिया गया है। स्वास्थ्य संबंधित आँकड़ों से पता चलता है कि महिलाएँ किस प्रकार की सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में जीवन-यापन करती हैं।

ज़ाहिर है कि प्रश्नावली का निर्माण भारतीय सामाजिक संरचना और पितृसत्तात्मक संरचना के अनुसार किया जाना चाहिए क्योंकि यही संरचनाएँ भारतीय महिलाओं की आर्थिक भागीदारी में बाधक बनती हैं, उनकी प्रतिभा को नकारती हैं और उन्हें मुख्यधारा से ओझल कर देती हैं। दिन-प्रतिदिन के जीवन में उन पर ऐसे तमाम कार्य थोपे जाते हैं जिन्हें उनकी सांस्कृतिक भूमिका माना जाता है। महिलाएँ इनका विरोध नहीं कर पातीं क्योंकि समाजीकरण[43] की प्रक्रिया के तहत उन्हें इसी तरह के कार्य सिखाए जाते हैं। इसी रूढ़िवादी सोच और मनोवृत्ति के कारण महिलाओं को सांख्यिकी में जगह नहीं मिल पाती और इसी के चलते वे अदृश्य होकर रह जाती हैं। सही आँकड़े इकट्ठा करने के लिए सांस्कृतिक, संस्थागत बाधाओं, पारिवारिक और सामुदायिक प्रथाओं, क्षेत्रीय भिन्नता के साथ घर और बच्चों के देखभाल के काम के पक्षों पर अधिक ध्यान देना होगा। उनसे संबंधित सवालों को जोड़ कर लैंगिक आयामों के हवाले से किये जाने वाले सर्वेक्षण से बेहतर सांख्यिकी उपलब्ध कराई जा सकती है। वर्तमान प्रणाली इस तथ्य से अनभिज्ञ है कि कतिपय सामाजिक प्रथाओं का महिलाओं के जीवन पर कितना हानिकारक प्रभाव पड़ता है। भारत के सांख्यिकी संगठनों द्वारा किये गये सर्वेक्षणों में यह प्रभाव परिलक्षित नहीं होता। भारत में स्त्री विरोधी संरचनाओं का उत्स सामाजिक संरचना और पितृसत्तात्मकता में निहित है। हमें ऐसी संरचनाओं को उजागर करना चाहिए। ये संरचनाएँ न केवल महिलाओं की श्रम-शक्ति को बाधित करती हैं, बल्कि उनकी क्षमता का भी अवमूल्यन करती हैं।

**विवाह के समय होने वाले प्रवास को श्रम का स्थानांतरण समझा जाना चाहिए क्योंकि अगर दलित लड़कियाँ शादी के पहले अपने खेतों में काम करती हैं और शादी के बाद ससुराल में खेतों में काम करके आर्थिक उत्पादन करती हैं तो इसको वैवाहिक कारण के साथ आर्थिक कारण माना जाना चाहिए। ... किसी समूह ... के सही और सटीक आँकड़े इकट्ठा करने के बाद ही सही नीतियों का निर्माण किया जा सकता है। ग़लत आँकड़े एक विकसित समाज के मनुष्यों के जीवन-जगत को प्रभावित करते हैं।**

## सेंसस द्वारा आँकड़े इकट्ठा करने की प्रविधि

जनगणना में कार्य[44] की परिभाषा इस आधार पर तय की जाती है कि व्यक्ति किसी प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलग्न है या नहीं। इसके अनुसार किसी भी कार्य को आर्थिक रूप से उत्पादक होना चाहिए। चाहे वह निरीक्षण का कार्य ही क्यों न हो। इस तरह, जनगणना महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यों— खेती और पशुओं के चारे का प्रबंध करने आदि जैसे कार्यों को ग़ैर-आर्थिक[45] कामों

(ब) छोड़ना चाहती थी, (भ) अन्य.

[43] रूथ हार्टले ने अपनी पुस्तक में चार तरह के समाजीकरण की प्रकिया बताई है जिसे क्रमश: मैनिपुलेशन, कैनलाईज़ेशन, वर्बल अपीलेशन और एक्टिविटी एक्सपोज़र कहा जाता है जिसके तहत दिन-प्रतिदिन के जीवन में लड़के और लड़कियों से अलग-अलग व्यवहार किये जाते हैं और उनसे अलग-अलग भूमिका की आशा की जाती है. पुरुषत्व तथा नारीत्व का निर्माण इसी तरह किया जाता है. कमला भसीन (2010).

[44] कार्य को आर्थिक रूप से उत्पादक गतिविधि में भागीदारी के रूप में परिभाषित किया गया है. ऐसी भागीदारी शारीरिक और / या मानसिक प्रकृति की हो सकती है, काम में न केवल वास्तविक कार्य शामिल है, बल्कि प्रभावी निरीक्षण भी कार्य की संज्ञा में शामिल है. डिस्ट्रिक्ट सेंसस हैंडबुक, आजमगढ़ (2001) : 10.

[45] ग़ैर-आर्थिक अर्थव्यवस्था का मतलब है घरेलू श्रम, बच्चों-बुज़ुर्गों की देखभाल करने जैसी गतिविधियाँ जिसका कोई मौद्रिक मूल्य नहीं

में रख देती है। पति के प्रवास पर जाने के बाद खेतों में काम तथा पशुओं के खाने और चारे का प्रबंध महिलाएँ करती हैं, किंतु वे न तो कृषक की श्रेणी में आती हैं और न उनके कामों को आर्थिक उत्पादन की श्रेणी में रखा जाता है। यही वजह है कि उन्हें कार्मिक जनसंख्या में शामिल नहीं किया जाता। ये आँकड़े इसलिए विसंगतिपूर्ण होते हैं क्योंकि उन पर पितृसत्तात्मक की छाया रहती है। जब जनगणना अधिकारी सर्वे करते हैं तो उस प्रश्नावली में पहला प्रश्न घर के मुखिया 'हेड ऑफ़ द हाउसहोल्ड' से संबंधित होता है।[46] भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में घर का मुखिया पुरुष ही होता है, चाहे वह उम्र में महिला से छोटा या उसका पुत्र ही क्यों न हो। बहुत से मामलों में महिलाएँ आर्थिक उत्पादन (सरकारी पेशे से शिक्षक) करते हुए भी घर के मुखिया के रूप में नहीं गिनी जातीं।[47] यह पितृसत्तात्मक संरचना और रूढ़िवादिता सरकारी कार्यों में भी प्रदर्शित होती है। इस संबंध में यह बात भी महत्त्वपूर्ण होती है कि प्रश्नों का उत्तर कौन दे रहा है? सांस्कृतिक बंधनों के चलते सर्वे करने वाले और उत्तर देने वाले लोग अधिकांशत: पुरुष ही होते हैं। सरकारी संगठन में अगर किसी महिला को जनगणना अधिकारी के पद पर नियुक्त कर भी दिया जाता है तब भी सांस्कृतिक बंधनों के कारण वह गाँवों में घूम-घूम कर सर्वे नहीं कर सकती। यह ज़िम्मेदारी महिला से संबंधित कोई दूसरा पुरुष पूरी करता है। सर्वे की प्रकिया पुरुषकर्मी के हाथ में आने का परिणाम यह होता है कि महिलाएँ सहज ढंग से जवाब नहीं दे पाती। आँकड़े एकत्र करने वाले लोगों को जेंडर-संवेदी होने चाहिए और उन्हें इस तथ्य का भी ध्यान रखना चाहिए कि सर्वेक्षण के समय जो व्यक्ति स्वयं को मुखिया बता रहा है उसकी घर में क्या हैसियत है या कि वह घर में कितना आर्थिक सहयोग देता है। सेंसस प्रवास का आँकड़ा 'जन्म स्थान और अंतिम निवास स्थान' के आधार पर आठ विकल्पों के माध्यम से इकट्ठा करता है। नीचे की तालिका में पुरुष की कार्यदर 45.3 प्रतिशत है जबकि महिलाओं की कार्यदर 7.6 प्रतिशत है। इसका कारण सर्वे के समय महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यों को बताया न जाना है। जब भी जनगणना अधिकारी सर्वे करता है तो उस समय ध्यान देना चाहिए कि उसके सवालों का उत्तर कौन दे रहा है। कई बार ऐसा होता है कि पुरुष महिलाओं से संबंधित सवालों को तवज्जो नहीं देते या अपने मुताबिक़ जवाब देते हैं। यह घरेलू काम को काम न समझने की मानसिकता के कारण होता है। उनका आर्थिक योगदान नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है। इसके विपरीत मेरे सामने अपने अध्ययन-क्षेत्र में सभी प्रवसित महिलाओं द्वारा छोटे-छोटे आर्थिक उत्पादन के कार्य करने के तथ्य आये। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उनका आर्थिक योगदान छिप गया है और उनके अदृश्य हाथ[48] को कोई नहीं देख रहा।

---

है लेकिन यह अर्थव्यवस्था का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है.

[46] मैत्रेयी कृष्णाराज (1990) ने एक लेख में जनगणना की प्रश्नावली में वर्णित घर के मुखिया से संबंधित कॉलम पर प्रश्न उठाया है.

[47] फ़ील्ड निरीक्षण, 2015.

[48] इनविज़िबल हैण्ड (अदृश्य हाथ) के सिद्धांत का सूत्रीकरण एडम स्मिथ ने अपनी पुस्तक *वेल्थ ऑफ़ नेशंस* में बाजार के दृष्टिकोण से किया है. उनका कहना है कि एक अलक्षित बाज़ार स्वतंत्र बाज़ार में माल की माँग और आपूर्ति को स्वचालित बनाने में सहायता करता है. इस संदर्भ में लेखक इस सिद्धांत की बात करता है कि पुरुष जब बाहर किसी फ़ैक्ट्री में काम करने जाते हैं तो घर पर उनके लिए सभी सुविधाएँ महिला द्वारा पहले से तैयार रखी जाती हैं. इस काम में महिलाओं की शारीरिक और मानसिक ऊर्जा ख़र्च होती है, लेकिन इसके लिए उन्हें आर्थिक भुगतान नहीं मिलता और वे पति पर आश्रित मानी जाती हैं.

**तालिका-2**

| प्रवास के कारण | प्रवास का समय (0-09) | | |
|---|---|---|---|
| | व्यक्ति | महिला | पुरुष |
| सभी राज्य | 100 | 100 | 100 |
| कार्य/रोज़गार | 21.5 | 7.6 | 45.3 |
| व्यापार | 0.7 | 0.4 | 1.2 |
| शिक्षा | 3.0 | 0.7 | 6.9 |
| विवाह | 36. | 57.8 | 1.1 |
| जन्म के बाद | 0.7 | 0.5 | 1.0 |
| पारिवारिक प्रवास | 28.9 | 27.8 | 30.9 |
| अन्य | 8.3 | 5.2 | 13.6 |

स्रोत : तालिका डी-1, डी-2 और डी-3, जनगणना (2001) : 35

महिला जनगणना अधिकारी ... सांस्कृतिक बंधनों के कारण वह गाँवों में घूम-घूम कर सर्वे नहीं कर सकती। यह ज़िम्मेदारी महिला से संबंधित कोई दूसरा पुरुष पूरी करता है। सर्वे की प्रकिया पुरुषकर्मी के हाथ में आने का परिणाम यह होता है कि महिलाएँ सहज ढंग से जवाब नहीं दे पातीं। आँकड़े एकत्र करने वाले लोगों को जेंडर-संवेदी होना चाहिए ... जो व्यक्ति स्वयं को मुखिया बता रहा है उसकी घर में क्या हैसियत है या कि वह घर में कितना आर्थिक सहयोग देता है।

### प्रवास की प्रक्रिया में महिलाओं के दैनिक जीवन का विवरण

प्रवास के द्वितीयक स्रोत का विश्लेषण करने के बाद क्षेत्र अध्ययन से सरकारी आँकड़ों की तुलना की जाए तो दोनों में काफ़ी असमानता मिलती है। जहाँ सरकारी आँकड़ों में महिलाओं के कार्य और प्रवास की प्रतिशता कम रहती है, वहीं महिलाओं के अनुभव से लगता है कि वे काम का दोहरा बोझ ढो रही हैं।

मैं दो महिलाओं के जीवन-जगत से संबधित तथा एक सामूहिक और मिश्रित वृतांत प्रस्तुत कर रही हूँ। इनसे उनके दैनिक जीवन के बारे में यह पता चलता है कि उनके पास फ़ुर्सत का समय नहीं होता। इससे यह भी ज्ञात होता है कि वह कितना कार्य करती है। इनमें एक उदाहरण मूल स्थान पर रहने वाली तथा दूसरा गंतव्य स्थान पर जाने वाली श्रेणी की महिला से संबंध रखता है। तीसरा वृत्तांत महिलाओं की सुरक्षा पर केंद्रित है।

**पहला वृत्तांत : तीस वर्षीय** अनारमा मूल स्थान पर रहने वाली दलित महिला है जिनके पति दिल्ली में राजमिस्त्री का काम करते हैं। लेकिन वहाँ से पति जो पैसा भेजते हैं उससे घर का ख़र्च नहीं चल पाता। अनारमा गाँव में ऊँची जाति वालों का खेत अधिया[49] पर ले कर उसमें काम करती है जिससे घर का ख़र्च चलता है। उनका दिन सुबह के पाँच बजे से शुरू हो जाता है। खाना बनाने के साथ वह घर की साफ़-सफ़ाई करती है। कभी कभी उसे रात के बचे हुए खाने से ही काम चलाना

[49] अधिया खेती बँटाई पर आधारित खेती का एक ऐसा प्रकार है जिसमें कुल उत्पादन भूमिहीन व्यक्ति तथा भूमि के स्वामी के बीच आधा-आधा बँट जाता है. अधिया खेती करने वाले व्यक्ति का भूमि पर कोई अधिकार नहीं होता.

पड़ता है। उसके बाद खेत में सुबह चार से पाँच घंटे काम करती है। घर आने के बाद पशुओं के चारे आदि का भी प्रबंध करना, शाम को घर के बर्तन साफ़ करना और खाना बनाना भी उसी की ज़िम्मेदारी होती है। खेत पर जाने के बाद घर की देखभाल उनकी छोटी बच्ची करती है। इस तरह, घर के कामों के साथ-साथ अनारमा आर्थिक उत्पादन भी करती है। पर खेत में काम करने के बावजूद उनकी सामाजिक पहचान किसान की न होकर महिला की है। उन्हें किसान गोष्ठियों में प्रशिक्षण के लिए नहीं बुलाया जाता और उनके द्वारा अर्जित धन को पति द्वारा भेजी गयी रक़म से कम महत्त्व दिया जाता है। दलित महिलाओं के शोषण की कई परतें होती हैं।[50] जाति के आधार पर तो उनका शोषण होता ही है, अपने समुदाय में वे अपने पतियों के द्वारा भी शोषित होती हैं। पुरुष के घर आने के बाद घर के कामों में सहायता करने के सवाल पर वे कहती हैं, *अदमी बाबू लोगन के खेत में काम न करे चाहेल अउर हमके भी मना करेल, एक-दू महिना घरे ख़ाली बैठिहे लेकिन दुसरे क बेगारी न करिहे। काम भी न करिहें अउर जब पईसा माँगा त न दिहें ... पूरा ख़र्च अपने बले पर कयिनी ... अबहिन पोता क बधावर रहल ... एक पईसा न दिहले* (पति ऊँची जाति वालों के खेत में काम नहीं करना चाहते और हमको भी मना करते हैं। घर पर बिना काम के ख़ाली एक-दो महीने बेरोज़गार बैठे रहते हैं लेकिन मज़दूरी नहीं करते ... काम भी नहीं करते और पैसे माँगने पर नहीं देते ... अभी पौत्र पैदा होने पर पूरा ख़र्च मैंने किया।)[51]

इस प्रकार मूल स्थान पर छूटी हुई महिलाएँ प्रवसित पति को आर्थिक सहायता मुहैया करने का काम करती हैं, घर के काम के साथ-साथ आर्थिक उत्पादन करती हैं, लेकिन पितृसत्तात्मक विचार और रूढ़ियों के कारण उनका योगदान अदृश्य रह जाता है और पुरुष को प्रमुख पालनकर्ता मान लिया जाता है।

**दूसरा वृत्तांत :** महिलाओं के प्रवास के कई स्वरूप होते हैं। उच्च और मध्यम वर्ग की महिलाएँ स्वतंत्र रूप से शिक्षा और रोज़गार के लिए प्रवास करती हैं। दूसरा रिले माइग्रेशन होता है जिसमें लोगों के पास गाँव में कुछ ज़मीन होती है और लोग अपनी बेटियों को घरेलू नौकर के रूप में किसी सुरक्षित और पहचान की जगहों पर भेजते हैं। पहली के बाद दूसरी लड़की जाती है, और यह तब तक होता है जब तक उन लड़कियों की शादी न हो जाए। तीसरा स्वरूप पारिवारिक प्रवास होता है जिसमें पत्नी घर पर रुकने के बजाय गंतव्य पर जाकर पति के साथ कुछ आर्थिक अर्जन करती है। इन सबके साथ प्रवास का सांस्कृतिक कारण विवाह जुड़ा है। यह महिला-प्रवास के प्रत्येक वर्ग में पाया जाता है। पैंतीस वर्षीय सुमित्रा प्रवास की इसी श्रेणी में आती हैं। उसके परिवार के पास गाँव में खेत नहीं है। वे अपने पति के साथ गुजरात में रहती हैं। सुमित्रा जब गुजरात में गौशाला रोड स्थित अपने घर का पता बताती है तो उसके चेहरे पर ख़ास तरह की ख़ुशी झलकती है।

वे यह भी बताती हैं कि वहाँ चारों तरफ़ बड़े-बड़े मकान हैं। उनके पति वहीं किसी कम्पनी में स्वेटर और शाल की बुनाई और सिलाई का काम करते हैं। वे दिन भर में 24-25 स्वेटर सिल लेते हैं। ज़्यादा पैसा कमाने के लिए पति अपने हिस्से का काम घर पर भी ले आता है। सुमित्रा भी घर का काम करने के बाद स्वेटर को सिल कर बटन लगाने और शालों में गाँठ लगाने का काम करती है। उनके इस काम का भुगतान पति को किया जाता है। जब वह अपने पति के साथ कम्पनी में जा कर काम करने की बात करती हैं तो पति हर बार टाल जाता है। जब यह पैसा घर भेजा जाता है तो इसे पति की कमाई माना जाता है। सुमित्रा के अनुसार इस कमाई में उसकी पहचान और

[50] शर्मिला रेगे (1998).

[51] फ़ील्ड डायरी (2015).

योगदान का कभी ज़िक्र तक नहीं किया जाता। अपना नाम न आने पर उसे अफ़सोस होता है या नहीं? यह पूछने पर सुमित्रा कहती है : *सब माया मोहब्बत है, उनके ही भरोसे त हई हम का करब पईसा उनके बिना (सब कुछ प्यार होता है ... मैं अपने पति के भरोसे पर तो आई हूँ, यहाँ पर उनके बिना पैसे का क्या करूँगी मैं*)। इस एकतरफ़ा स्नेह और सहिष्णुता को महिलाओं के समाजीकरण में समाविष्ट कर दिया जाता है। इसके दायरे से बाहर आने में उन्हें अपराध का बोध होता है। सुमित्रा सुबह उठने के बाद रात में 10-11 बजे के बाद ही आराम कर पाती है। दिन में उसके लिए फ़ुरसत का कोई वक़्त नहीं होता, जबकि उसका पति कम्पनी में जाने से पहले और कम्पनी से आने के बाद ख़ाली रहता है। वह उसके आराम का समय होता है। इस तरह, प्रवास करने वाली महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कामों की अदृश्यता बनी रहती है और साथ ही पूँजीपतियों को कम लागत में मज़दूर भी उपलब्ध हो जाते हैं। अलग से कहने की ज़रूरत नहीं है कि इस तरह पूँजीपति वर्ग भी पितृसत्ता को बनाए रखने में सहयोग देता है।

**मिश्रित वृत्तांत :** लेख के इस भाग में मैं सामूहिक रूप से दोनों तरह की महिलाओं के जीवन से जुड़े कुछ महत्त्वपूर्ण पहलुओं की तरफ़ ध्यान आकर्षित करना चाहूँगी। पति के प्रवास के बाद इन महिलाओं का जीवन सामाजिक सुरक्षा और आपसी संबंधों को बनाने की जुगत में लगा रहता है। निम्न वर्ग की महिलाएँ, चाहे वे मूल स्थान पर हों या गंतव्य पर, अधिकांशतः अशिक्षित या पहले-दूसरे दर्जे तक ही पढ़ी होती हैं। मेरे अध्ययन की सभी महिलाएँ कमज़ोर जाति से संबंध रखती हैं। उनका जीवन-संघर्ष और गुंजाइश के बीच से निकलता है इसलिए इन्हें बचपन से ही जीवन और जुगत की अंतर्क्रिया के हुनर पता हो जाता है।

पति के प्रवास पर जाने के बाद समाज मूल स्थान पर रहने वाली महिलाओं को दावेदार के रूप में नहीं देखता। यह इन महिलाओं के लिए एक गम्भीर समस्या होती है। अगर उन्हें ऋण की ज़रूरत होती है तो कोई उन्हें पैसे उधार देने को तैयार नहीं होता क्योंकि क़र्ज़दाता को लगता है कि ऐसी महिलाएँ क़र्ज़ चुकता नहीं कर पाएँगी। सरकारी योजनाओं का लाभ लेने और राशन कार्ड बनवाने के लिए उन्हें ग्राम प्रधान और पंचायत और तहसीलों के चक्कर लगाने होते हैं, जबकि जिन लोगों के घरों में पुरुष होते हैं उन्हें ऐसी योजनाओं का लाभ शीघ्र ही मिल जाता है। स्त्री-देह होने के कारण उन्हें देह विशेष की सुरक्षा का भी ध्यान रखना होता है जिसके कारण वे कई बार आपसी रिश्तों में भी तनाव महसूस करती हैं। इन बातों से उनके स्वच्छंद घूमने व रहने में बाधा पड़ती है। पुरुष जब शहर जाने से पहले उन्हें रहने संबंधी तौर-तरीक़े बताते हैं, क्योंकि वे उन्हें लेकर असुरक्षित महसूस करते है, किंतु फिर भी ये महिलाएँ अपने तरीक़े से जीवन जीने की जुगत निकाल लेती हैं।

तीस वर्षीय उर्मिला कहती है : अब आदमी जेतना समझाहिहें वोतना थोड़े करके ह ... अगर हमार मन करे बजार जाये क, अउर बताय देईन त पूछिहे कौनो काम ह कहाँ पईसा मिला? जाए भी न दिहे ऊपर से सवाल पै सवाल तो हम बतायिबे न करीला। हमही के उनके मन क करे क होत ह ...हमरे मन के केहू काम नाही करत है। हमके समझ में आवत है चूल्हा चौका हम उहे करत ह... हमार कौनो रावा गिनती न होत है अईसन लिख देतु की तनी हमारो राव गिनती होए लागत बहिनी ... (पुरुष जब शहर जाते हैं तो अपनी औरतों को आचरण निर्देश देकर जाते हैं ...पति का क्या है वे तो बताते हैं कि कैसे रहना है, लेकिन अब वे जितना बताएँगे उतना ही नहीं करते हैं। अगर बाज़ार जाने का मन करता है तो पूछने पर कहेंगे कि क्या काम है कहाँ से पैसा मिला। जाने भी नहीं देते हैं और सवाल पर सवाल भी करते हैं। हमको बस घर का काम समझ में आता है। मैं वही करती हूँ ... हमको सब उनके मन का करना होता है, मेरे मन का कोई नहीं करता। कुछ ऐसा लिख देती कि जिससे मेरी भी घर में सुनने लगते ...)। उनके दिन प्रतिदिन के जीवन को देखकर लगता है कि वे कैसे

सक्षमता और निर्भरता के बीच एक जुगत खोजती रहती हैं। उन्हें यह भरपूर बोध होता है कि कब पति की बात माननी है और कब किस तरह से विरोध जताना है।[52]

गाँव की अन्य महिलाएँ भी, जो मूल स्थान पर रहती हैं, शहर जाने की आकांक्षा रखती हैं। एक महिला आशा किरण[53] में काम करती है और अपने पति के साथ शहर में रहना चाहती है। उसका कहना है कि : *हमार चले त हम वहीं रही, दिन भर घूमित लेकिन अब उ लियाही नहीं जात है तो का करी। हमार बहुत मन होते है जायके, देश दुनिया देखे के, कईसे जाहि अब नसीब रही तब न जाहि। अगर जाए के मिल जाए तो वहाँ जाकर कौनो तरह का काम, झाड़-पोंछा, बर्तन कर लेती* (यदि मेरी मर्ज़ी चले तो मैं वहीं रहती लेकिन अब वे ले ही नहीं जाते तो मैं क्या करूँ? कैसे जाए जब भाग्य में ही नहीं है तो अगर जाने कि अनुमति मिल जाए तो मैं वहाँ झाड़, पोंछा, बर्तन तथा अन्य काम करके आर्थिक सहयोग भी करती)। पति के साथ प्रवास करने वाली महिलाएँ शहरी जीवन से आकर्षित होकर परिवार में आर्थिक योगदान भी देती हैं।

इस तरह जो महिलाएँ शहर में रहती हैं उनके जीवन अनुभव अलग तरह के होते हैं, क्योंकि वे जिस बेहतर भविष्य के बारे में सोच कर प्रवास करती हैं,[54] वह उन्हें वहाँ हासिल नहीं हो पाता। आवश्यक संसाधनों के अभाव में उनकी स्थिति गाँव से भी बदतर हो जाती है। छत्तीस वर्षीय विद्या, अपने पति के साथ मुम्बई में रहती है। उसका पति कपड़ों पर प्रेस करने का काम करता है। उसका कहना है कि वहाँ कमरे के किराये से लेकर, लाइट, पानी, ख़र्च-खोराकी, कचरा सब के लिए पैसा लगता है। उसका पति उसे बाहर कोई काम नहीं करने देता क्योंकि उसे लगता है कि वह शहर के वातावरण के साथ सामंजस्य नहीं बिठा पाएगी।

## निष्कर्ष

गाँव में पीछे छूट जाने वाली महिलाएँ ज़िम्मेदारी का दोहरा बोझ वहन करती हैं। इसके बावजूद उनकी पहचान प्रवासी के रूप में नहीं की जाती। पति की अनुपस्थिति में वे घरेलू कामों के साथ कृषि-कार्य भी करती हैं, फिर भी उन्हें किसान का दर्जा नहीं दिया जाता। इस तरह, उनका योगदान प्रवास-प्रक्रिया से पूर्णतः बाहर रह जाता है। योगदान की इस अनदेखी के कारण इन महिलाओं की व्यक्तिगत पहचान भी अदृश्य रह जाती है। इस समूची प्रक्रिया में पितृसत्ता अहम भूमिका निभाती है। आंतरिक प्रवास में अंतर्राष्ट्रीय प्रवास की तरह महिलाओं को ज़्यादा स्वतंत्रता नहीं मिलती। इन महिलाओं को अपनी गतिशीलता और स्वतंत्रता के लिए जुगत भिड़ानी होती है। पति जैसे ही प्रवास से लौट कर आता है, घर की बागडोर पुनः उसी के हाथों में चली जाती है। इस स्थिति में सभी निर्णय पुरुष की इच्छा के अनुसार लिए जाते हैं। कुछ निर्णयों को महिलाएँ स्वीकार लेती हैं, परंतु कुछ को अपनी सुविधानुसार परिवर्तित भी कर लेती हैं जिसे कंदियोती ने पितृसत्तात्मक सौदेबाज़ी का उदाहरण बताया है।[55] जब नीति-निर्माता उनकी पहचान और योगदान को दर्ज नहीं करते तो इसका परिणाम यह होता है कि राज्य भी अपने दायित्व से विमुख हो जाता है। इस प्रकार, ये दोनों कारक अंततः स्त्री की अदृश्यता में इज़ाफ़ा करते हैं। इस स्थिति को अमर्त्य सेन के निष्क्रिय बहिष्कार[56] के सिद्धांत द्वारा समझा जा

[52] कंदियोती (1988).

[53] मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (एक्रेडिटेड सोशल हेल्थ एक्टिविस्ट), जिसे संक्षेप में आशा (एएसएचए) कहते हैं जो स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रायोजित जननी सुरक्षा योजना से सम्बद्ध है और राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के माध्यम से संचालित होती है.

[54] प्रवास का आकर्षण और विकर्षण सिद्धांत. देखें, रेवेंस्तीन (1889).

[55] कंदियोती (1988).

[56] अमर्त्य सेन (2000) : 21.

सकता है जिसमें राज्य जानबूझ कर किसी व्यक्ति विशेष को बाहर निकलने की नीति नहीं बनाता किंतु सामाजिक प्रक्रिया या पहले से बनी हुई नीतियों के कारण कुछ लोग मुख्यधारा से बहिष्कृत हो जाते हैं। अत: जैसी नीतियाँ गंतव्य स्थान के प्रवासियों के लिए बनाई गयी हैं, वैसी ही नीतियाँ इन महिलाओं के लिए भी बनाई जानी चाहिए ताकि उन्हें राज्य द्वारा निर्धारित सरकारी कल्याण कार्यक्रमों का उचित लाभ मिल सके।

समाज में महिलाओं के ऊपर परिवार चलाने और बच्चे के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी रहती है और अगर वह घर के बाहर काम करने की सोचती है तो वह घर के काम करने के बाद ही दूसरा काम कर सकती है। महिला की पहली और मुख्य भूमिका मातृत्व के दायित्वों से तय होती है। पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना ने जहाँ महिलाओं के सांस्कृतिक और सामाजिक अधिकार-बोध को कुचला है, वहीं महिलाएँ समाज और संस्कृति के निर्माण में अग्रणी भूमिका निभा रही है। औरतों के दैनिक कार्यों और पारिवारिक जीवन से यह स्पष्ट है कि वे हर समय घर के कार्यों में व्यस्त रहती हैं। देवकी जैन और वीना मजूमदार ने इन अवैतनिक कामों को काम न मानने का मुद्दा उठाया था। उन्होंने तर्क दिया था कि ऐसी परिभाषा स्वीकार्य नहीं हो सकती जिसमें अवैतनिक काम को काम न माना जाता हो। जनगणना, 2001 की प्रश्नावली पर मैत्रेयी कृष्णराज ने भी सवाल खड़ा किया था। किंतु अभी बहुत सुधार होना बाक़ी है जिसके लिए अकादमिक जगत में संवेदनशील और आनुभविक अध्ययन तथा शोध की ज़रूरत है। जनगणना और राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण और प्रचलित परिभाषाओं के चलते घरेलू काम, जिसमें महिलाएँ श्रम और समय लगाती है, को दरकिनार कर दिया जाता है। घर का काम और बच्चों की परवरिश और बुजुर्गों की देखभाल समाज में सद्‌भावपूर्ण संबंध के लिए आवश्यक है, किंतु इनका आर्थिक मूल्यांकन न होने के कारण महिलाओं की स्थिति ख़राब हो जाती है। महिलाओं को जब प्रवास की प्रक्रिया में दर्ज नहीं किया जाता तो वे राज्य की नज़र में अदृश्य हो जाती हैं। लिहाज़ा, महिलाओं के योगदान को सही तरह से दर्ज करना उनकी दृश्यमानता के लिए पहला और ज़रूरी क़दम होगा।

## संदर्भ


अभय कुमार दुबे (2013), *समाज विज्ञान विश्वकोश ( स-ज्ञ),* खण्ड 6, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली.

अंर्स्ट जियॉर्ग रेवेंस्तीन (1889), 'द लॉ ऑफ़ माइग्रेशन', *जर्नल ऑफ़ रॉयल स्टेटिस्टिकल सोसाइटी,* खण्ड 48, अंक 2.

अमर्त्य सेन (2000), *सोशल एक्सक्लूज़न : कंसेप्ट, एप्लीकेशन ऐंड स्क्रूटिनी,* एशियन डिवेलपमेंट बैंक, मनीला, फ़िलीपींस.

अमृता दत्ता और सुनील कुमार मिश्र (2001), 'ग्लिम्प्स ऑफ़ वुमॅन लेबर इन रूरल बिहार', *जर्नल ऑफ़ लेबर इकॉनॉमिक्स,* खण्ड 54, अंक 3.

अमिताभ कुण्डू और शालिनी गुप्ता (1996), 'माइग्रेशन ऐंड अरबनाईज़ेशन ऐंड रीजनल इनईक्वलिटी', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 31, अंक 52.

अल्फ्रेड शुल्ज़ और बर्जर लकमैन (1973), द *स्ट्रक्चर ऑफ़ लाइफ़ वर्ल्ड* (प्रथम खण्ड), नॉर्थवेस्टर्न युनिवर्सिटी प्रेस, एवांस्टन, आईएल.

उमा चक्रवर्ती (1993), 'कंसेप्चुलाइज़िंग ब्राह्मनिकल पैट्रियार्की इन अर्ली इण्डिया : जेंडर कास्ट, क्लास, ऐंड स्टेट', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 28, अंक 14.

ए.एस. अल्टेकर (1956), द *पोज़ीशन ऑफ़ वुमॅन इन हिंदू सिविलाइज़ेशन,* मोतीलाल ऐंड बनारसीदास, बनारस.

ए.एस. ओबेराय और एच.के. मनमोहन सिंह (1993), *काज़ेज़ ऐंड कंसिक्वेंसेज़ ऑफ़ इंटरनल माइग्रेशन,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

एलीना सामंथ रॉय और धान्या एम. बी.(2012), 'इनजेंडरिंग जेंडर स्टेटिस्टिक : एन एनैलिसिस ऑफ़ जेंडर डिफ़रेंशियेटेड स्टेटिस्टिक इन इंडिया', *वर्किंग पेपर,* वी.वी. गिरि नैशनल लेबर इंस्टीट्यूट, नोएडा, दिल्ली.

एस.एल. दोषी और पी.सी. जैन ( 2014) *भारतीय समाज, संरचना और परिवर्तन,* नैशनल पब्लिशिंग हाउस,

दिल्ली.
कमला भसीन (2010), *अंडरस्टैंडिंग जेण्डर,* काली फ़ॉर वीमेन, नयी दिल्ली.
कांचा ऐलैया (2017), *हिंदुत्व मुक्त भारत : दलित-बहुजन, सामाजिक-आध्यात्मिक और वैज्ञानिक क्रांति पर मंथन,* सेज़ पब्लिकेशन, नयी दिल्ली.
किंग्सले डेविस (1951), *पॉपुलेशन ऑफ़ इण्डिया ऐंड पकिस्तान,* प्रिंसटन युनिवर्सिटी प्रेस, न्यु जर्सी.
कुणाल केशरी और राम. बी.भगत (2013), 'सोसियो-इकॉनॉमिक डिटरमिनेंट्स ऑफ़ टेम्परेरी लेबर माइग्रेशन इन इंडिया', *एशियन पॉपुलेशन स्टडीज़,* खण्ड 9, अंक 2.
के. शांथी (2006), 'फ़ीमेल लेबर माइग्रेशन इन इंडिया : इनसाइट्स फ्रॉम एन. एस. एस. ओ. डाटा', *वर्किंग पेपर,* मद्रास स्कूल ऑफ़ इकॉनॉमिक्स, चेन्नई.
गर्डा लर्नर (1986), *क्रियेशन ऑफ़ पैट्रियार्की,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, न्युयॉर्क.
गोपा जोशी (2011), *भारत में स्त्री असमानता,* हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय.
गोपाल गुरु (2005), 'अवमानना के आयाम/हीनता की मनोग्रंथि : स्रोत और निराकरण', अभय कुमार दुबे (सं.), *आधुनिकता के आईने में दलित,* वाणी प्रकाशन, सीएसडीएस, नयी दिल्ली.
------(2013), 'अनुभव स्थान और न्याय', *प्रतिमान, समाज और संस्कृति,* सीएसडीएस, वाणी प्रकाशन, खण्ड 1, अंक 2.
जुरगेन हैबरमास और सारा लेनोक्स इत्यादि (1974), 'द पब्लिक स्फ़ियर : एनसाइक्लोपीडिया आर्टिकल', *न्यू जर्मन क्रिटिक,* अंक 3.
जॉन ब्रेमेन (1996), *फ़ुटलूज़ लेबर : वर्किंग इन इंडिया इनफ़ॉर्मल इकॉनमी,* केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.
जॉन स्टुअर्ट मिल (1869), *सब्जेक्शन ऑफ़ वुमॅन,* अंग्रेजी से अनु. युगांक धीर, मुंबई.
डगलस. एस. मेसी एवं अन्य (1993), 'थियरीज़ ऑफ़ इंटरनल माइग्रेशन', *पॉपुलेशन ऐंड डिवेलपमेंट रिव्यू,* खण्ड 19, अंक 3.
डेनिज कंदियोती (1988), 'बारगेनिंग विद पैट्रियार्की', *जेंडर ऐंड सोसाइटी,* खण्ड 2, अंक 3.
तलाल असद (1994),'एथ्नोग्राफ़ी रेप्रेजेंटेशन : स्टेटिस्टिक ऐंड मॉडर्न पॉवर', *सोशल रिसर्च,* खण्ड 61, अंक 1.
तेजस्विनी निरंजना (2006), *मोबिलाइज़िंग इंडिया : वीमेन, म्युजिक, ऐंड माइग्रेशन बिटवीन इंडिया ऐंड ट्रिनिडाड,* ड्यूक युनिवर्सिटी प्रेस, डर्हम.
दीपक कुमार मिश्र (2016), *इंटरनल माइग्रेशन इन कंटेम्परारी इंडिया,* सेज़ पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.
निक काउल्ड्री (2010), *व्हाय वॉयस मैटर्स : कल्चर ऐंड पॉलिटिक्स आफ़्टर नियोलिबरैलिज़म,* सेज़ पब्लिकेशंस, लंदन.
नित्या राव (2012), 'ब्रेड विनर्स ऐंड होम मेकर्स : माइग्रेशन ऐंड चेंजिंग कोंजुगल एक्सपेक्टेशंस इन रूरल बांग्लादेश', *जर्नल ऑफ़ डिवेलपमेंट स्टडीज़,* खण्ड 48, अंक 1.
------(2012), 'मेल प्रोवाइडर्स ऐंड फ़ीमेल हाउसवाइव्ज़ : अ जेंडर्ड कोपरफ़ार्मेंस इन रूरल नॉर्थ इंडिया', *डिवेलपमेंट ऐंड चेंज,* खण्ड 43, अंक 5.
निवेदिता मेनन (2012), *सीइंग लाइक अ फ़ेमिनिस्ट,* पेंगुइन बुक्स, नयी दिल्ली.
प्रिया देशिंग्कर, सुशील कुमार, हरेंद्र कुमार चौबे और धनंजय कुमार (2006), 'द रोल ऑफ़ माइग्रेशन ऐंड रेमिटेंसेज़ इन प्रमोटिंग लाइवलीहुड्स इन रूरल बिहार', बिहार रूरल लाइवलीहुड्स प्रोजेक्ट (बी.आर.एल.पी.) इंडिया.
बद्री नारायण (2016), *फ्रेक्चर्ड टेल्स : इनविज़िबल इन इंडियन डेमाक्रैसी,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.
बारबरा. बी. ब्राउन (1983), 'द इम्पैक्ट ऑफ़ मेल माइग्रेशन ऑन वुमॅन इन बोत्सवाना', *अमेरिकन अफ़ेयर्स,* खण्ड 82, अंक 328.
मारिया माईज (1980), *इंडियन वुमॅन ऐंड पैट्रियार्की,* कांसेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नयी दिल्ली.
मीनाक्षी थापन (2005), *ट्रांजिशनल माइग्रेशन ऐंड द पॉलिटिक्स ऑफ़ आइडेंटिटी,* सेज़ पब्लिकेशन,नयी दिल्ली.
मैत्रयी कृष्णराज (1990), 'वुमॅन वर्क इन इंडियन सेंसस : बिगनिंग्स ऑफ़ चेंज', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 25, अंक 48/49.
राम.बी. भगत (2010), 'इंटरनल माइग्रेशन इन इंडिया : आर द अंडर प्रिविलेज्ड क्लास माइग्रेटिंग मोर ?', *एशिया पेसिफ़िक पोपुलेशन जर्नल,* खण्ड 25, अंक 1.
---------(2016), 'नेचर ऑफ़ माइग्रेशन ऐंड इट्स कंट्रीब्यूशन टू इंडिया', दीपक कुमार मिश्र (सं), *इंटरनल माइग्रेशन इन कंटेम्परारी इंडिया,* सेज़ पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.
रवि श्रीवास्तव (2011), 'इंटरनल माइग्रेशन इन इंडिया : एन ओवरव्यू ऑफ़ इट्स फ़ीचर्स, ट्रेंड्स, ऐंड पॉलिसी चैलेंजेज़', युनिसेफ़ नैशनल वर्कशॉप ऑन इंटरनल माइग्रेशन ऐंड ह्युमन डिवेलपमेंट इन इंडिया, 6-7 दिसम्बर 2011,

17_neha:Layout 1 03-Oct-19 4:10 PM Page 293



आई.सी.एस.एस.आर. द्वारा आयोजित कॉन्फ्रेंस में पढ़ा गया पर्चा, नयी दिल्ली.
शर्मीला रेगे (1998), *राइटिंग कास्ट / राइटिंग जेंडर : रीडिंग दलित वुमॅन टेस्टीमॅनीज़,* ज़ुबान पब्लिकेशन, नयी दिल्ली.
रोजमरिन होएफ़्ते (1987), 'फ़ीमेल इंडेंचर्ड लेबर इन सूरीनाम : फ़ॉर बेटर ऑर फ़ॉर वर्स ?', *बोलेटीन दी स्तुदियस लेटिन अमेरिकंस वाई देल कैरीब,* अंक 42.
रोडा रेडोक (1986), 'इंडियन वुमॅन ऐंड इंडेंचरशिप इन त्रिनिदाद ऐंड टोबैगो 1845–1917 : फ्रीडम डिनाइड', *कैरिबियन क्वार्टली,* खण्ड 54, अंक 4.
लीला गुलाटी (1987), 'कोपिंग विद मेल माइग्रेशन,' *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 22, अंक 44.
............. (1993), *इन द एबसेंस ऑफ़ देयर मेन : इम्पैक्ट ऑफ़ मेल माइग्रेशन ऑन वुमॅन,* सेज़ पब्लिकेशन, नयी दिल्ली.
यू. कल्पगम (2014), *रुल बाई द नंबर्स : गवर्नमेंटेलिटी इन कोलोनियल इंडिया,* ओरियंट ब्लेक स्वान, नयी दिल्ली.
श्यामाचरण दुबे (1996), *विकास का समाजशास्त्र,* वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली.
शॉन मलिया कनैयोपुनी (2000), 'रिफ्रेमिंग द माइग्रेशन क्वेश्चन : एन एनैलिसिस ऑफ़ मेन, वुमॅन जेंडर इन मैक्सिको', *सोशल फ़ोर्स,* खण्ड 78, अंक 4.
सुरिंदर जेटली (1987), 'इम्पैक्ट ऑफ़ मेल माइग्रेशन ऑन रूरल फ़ीमेल', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 22, अंक 44.
ह्यूज टिंकर (1974), *अ न्यू सिस्टम ऑफ़ स्लेवरी: द एक्सपोर्ट ऑफ़ इंडियन लेबर ओवरसीज, 1830–1920,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लंदन.
हरप्रसाद चट्टोपाध्याय (1987), *इंटरनल माइग्रेशन इन इण्डिया,* के. पी. बागची ऐंड कम्पनी, कलकत्ता और नयी दिल्ली.